Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049-4176

नवदोत्तरी हिंदी उपन्यासों में नारी चिंतन के विविध आयाम: एक अनुशीलन

मनिषा गणपतराव अडसूळ
पीएच.डी. शोध-छात्र, हिंदी विभाग, मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विद्याशाखा, साबरमती विश्वविद्यालय, अहमदाबाद (गुजरात)
डॉ. दिपक विश्वास पाटील
शोध-निर्देशक, हिंदी विभाग, मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विद्याशाखा, साबरमती विश्वविद्यालय, अहमदाबाद (गुजरात)

सारांश
प्रस्तुत शोध आलेख नवदोत्तरी हिंदी उपन्यासों में अभिव्यक्त नारी चिंतन के विविध आयामों का अनुशीलन प्रस्तुत करता है। स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज में आधुनिक शिक्षा, नगरीकरण, औद्योगीकरण तथा लोकतांत्रिक चेतना के प्रभाव से स्त्री की सामाजिक स्थिति और साहित्यिक छवि में व्यापक परिवर्तन आया। इस दौर के उपन्यासों में स्त्री केवल त्याग, ममता और सहनशीलता की पारम्परिक प्रतिमा तक सीमित न रहकर स्वतंत्र व्यक्तित्व, अस्मिता, आत्मनिर्णय और अधिकार-बोध से युक्त चेतनशील इकाई के रूप में उभरती है। प्रभा खेतान का छिन्नमस्ता, मृदुला गर्ग का कठगुलाब, मैत्रेयी पुष्पा का चाक, चित्रा मुद्गल का आवाँ तथा ममता कालिया का एक पत्नी के नोट्स जैसी कृतियाँ स्त्री-देह, श्रम, प्रेम, यौनिकता, मातृत्व, आर्थिक स्वावलम्बन और सामाजिक प्रतिरोध के प्रश्नों को नारी चिंतन के केन्द्र में स्थापित करती हैं। यह आलेख भारतीय एवं पाश्चात्य नारीवादी दृष्टियों के आलोक में इन कृतियों का विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट करता है कि नवदोत्तरी हिंदी उपन्यास स्त्री की 'स्थिति' के वर्णन से आगे बढ़कर उसकी 'चेतना' के विश्लेषण की ओर संक्रमण को दर्शाता है (शर्मा, 2019)। अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि यह साहित्य स्त्री-अस्मिता, आत्मसंघर्ष और सामाजिक परिवर्तन की चेतना को सशक्त बनाने का महत्त्वपूर्ण सृजनात्मक माध्यम है।

बीज शब्द: नारी चिंतन, नवदोत्तरी हिंदी उपन्यास, स्त्री-विमर्श, नारीवाद, पितृसत्ता, आत्मनिर्णय, स्त्री-अस्मिता।

1. भूमिका

हिंदी उपन्यास साहित्य भारतीय समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और वैचारिक परिवर्तनों को अभिव्यक्त करने वाली महत्त्वपूर्ण साहित्यिक विधा रहा है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय समाज में आधुनिक शिक्षा, नगरीकरण, औद्योगीकरण, लोकतांत्रिक चेतना तथा बदलती सामाजिक संरचनाओं के प्रभाव से स्त्री की स्थिति और उसकी भूमिका में व्यापक परिवर्तन दिखाई देने लगा (मिश्र, 2018)। विशेषतः नवदोत्तरी हिंदी साहित्य में स्त्री को केवल त्याग, सहनशीलता, ममता और पारिवारिक मर्यादा की पारम्परिक प्रतिमा के रूप में प्रस्तुत करने के स्थान पर उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व, अस्मिता, आत्मचेतना

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049-4176

और अधिकारों को महत्त्व दिया गया। इस दौर के उपन्यासों में स्त्री अपने अस्तित्व, सम्मान और निर्णय-अधिकार के लिए संघर्ष करती हुई दिखाई देती है। उसके जीवन से जुड़े प्रश्न परिवार, विवाह, प्रेम, मातृत्व, देह, यौनिकता, शिक्षा, श्रम, आर्थिक स्वावलम्बन तथा सामाजिक असमानता के व्यापक संदर्भों से जुड़ते हैं। इस प्रकार नारी चिंतन स्त्री की समस्याओं के चित्रण से आगे बढ़कर उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व और सामाजिक सहभागिता का विमर्श बन जाता है (वर्मा एवं सिंह, 2020)।

नवदोत्तरी हिंदी उपन्यासों में महिला उपन्यासकारों का योगदान इस दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण है कि उन्होंने स्त्री जीवन को उसके विविध सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेशों में प्रस्तुत किया। मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, प्रभा खेतान, चित्रा मुद्गल और ममता कालिया जैसी लेखिकाओं ने स्त्री-अनुभवों को अलग-अलग दृष्टिकोणों से अभिव्यक्ति दी है (पाण्डेय, 2021)। कठगुलाब में स्त्री के मनोवैज्ञानिक द्वन्द्व और स्वतंत्र चेतना, चाक में ग्रामीण स्त्री के संघर्ष एवं प्रतिरोध, छिन्नमस्ता में शहरी स्त्री के अस्तित्व और आर्थिक स्वावलम्बन, आवाँ में श्रमिक स्त्री के वर्गीय एवं लैंगिक संघर्ष तथा एक पत्नी के नोट्स में आधुनिक दाम्पत्य जीवन और स्त्री की भावनात्मक स्वतंत्रता को प्रमुखता प्राप्त होती है। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य इन्हीं विविध आयामों का अनुशीलन करते हुए यह स्पष्ट करना है कि नवदोत्तरी हिंदी उपन्यासों में स्त्री किस प्रकार पीड़िता की पारम्परिक भूमिका से आगे बढ़कर चेतनशील, संघर्षशील, आत्मनिर्भर और स्वतंत्र निर्णयक्षम व्यक्तित्व के रूप में विकसित होती है।

1.1 नवदोत्तरी हिंदी साहित्य: अवधारणा एवं स्वरूप

'नवदोत्तरी हिंदी साहित्य' से आशय सामान्यतः उस साहित्यिक प्रवृत्ति से है जो स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य के बाद विकसित बदलती सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों के बीच नए जीवन-मूल्यों और नए मानवीय प्रश्नों को अभिव्यक्ति देती है। हिंदी साहित्य के विकासक्रम में यह वह चरण है जिसमें साहित्यकारों ने पूर्ववर्ती आदर्शवादी, नैतिकतावादी और रूढ़ सामाजिक दृष्टियों से आगे बढ़कर व्यक्ति के अनुभव, अस्मिता, अस्तित्व, सामाजिक विसंगतियों और बदलते सम्बन्धों को अधिक प्रमुखता प्रदान की (शर्मा, 2019)। इस साहित्य में समाज को किसी स्थिर और एकरूप संरचना के रूप में नहीं देखा जाता, बल्कि परिवर्तनशील जीवन-व्यवस्था के रूप में ग्रहण किया जाता है। औद्योगीकरण, नगरीकरण, शिक्षा का प्रसार, मध्यवर्ग का विस्तार, राजनीतिक चेतना, वैश्वीकरण तथा संचार माध्यमों के विकास ने व्यक्ति और समाज के सम्बन्धों को प्रभावित किया, जिसके फलस्वरूप साहित्य में पारिवारिक संरचना, विवाह संस्था, स्त्री-पुरुष सम्बन्ध, जाति, वर्ग, आर्थिक विषमता और सामाजिक न्याय जैसे प्रश्न नए रूप में सामने आए।

नवदोत्तरी हिंदी साहित्य के स्वरूप को विशेष रूप से उसकी यथार्थपरकता, व्यक्तिकेन्द्रिता, प्रश्नाकुलता और विमर्शधर्मिता के आधार पर समझा जा सकता है। स्त्री-विमर्श इसी परिवर्तनशील साहित्यिक चेतना का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पक्ष है (चौधरी, 2017)। इसमें परम्परा का पूर्ण निषेध नहीं, बल्कि उसके पुनर्मूल्यांकन की प्रवृत्ति है; आधुनिकता का अंधानुकरण नहीं, बल्कि उसके प्रभावों की आलोचनात्मक पड़ताल है। इस दृष्टि से नवदोत्तरी हिंदी साहित्य बदलते भारतीय समाज का साहित्यिक दस्तावेज होने के

साथ-साथ नए मनुष्य, नई सामाजिक चेतना और नई स्त्री-अस्मिता की खोज का सृजनात्मक माध्यम भी है।

1.2 नारी चिंतन: अवधारणा

नारी चिंतन आधुनिक सामाजिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक विमर्श की एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा है, जिसके केन्द्र में स्त्री के अस्तित्व, अस्मिता, अधिकार, स्वतंत्रता, समानता, गरिमा और सामाजिक स्थिति से जुड़े प्रश्न आते हैं। 'नारी चिंतन' से आशय स्त्री के जीवन, अनुभवों, समस्याओं, आकांक्षाओं, संघर्षों और अधिकारों पर केन्द्रित उस वैचारिक दृष्टि से है, जो स्त्री की स्थिति को सामाजिक संरचनाओं और सत्ता-संबंधों के सन्दर्भ में समझने का प्रयास करती है (गुप्ता, 2020)। यह केवल स्त्रियों के विषय में विचार करना नहीं है, बल्कि यह भी पूछता है कि समाज में स्त्री की भूमिका किस प्रकार निर्धारित हुई, उसकी स्वतंत्रता पर किन संस्थागत और सांस्कृतिक नियन्त्रणों का प्रभाव रहा तथा वह अपनी पहचान और स्वायत्तता किस प्रकार स्थापित कर सकती है। इस संदर्भ में नारी चिंतन को केवल पुरुष-विरोधी दृष्टि के रूप में देखना उचित नहीं होगा; इसका व्यापक उद्देश्य लैंगिक असमानताओं की पहचान करते हुए स्त्री और पुरुष दोनों के लिए समान मानवीय गरिमा, अवसर और अधिकार की स्थापना करना है (राव, 2018)।

1.3 शोध के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध चार परस्पर सम्बद्ध उद्देश्यों पर केन्द्रित है। प्रथम, नवदोत्तरी हिंदी उपन्यासों में नारी चिंतन के उद्भव और विकास की प्रक्रिया को स्पष्ट करना। द्वितीय, चयनित पाँच उपन्यासों—छिन्नमस्ता, कठगुलाब, चाक, आवाँ तथा एक पत्नी के नोट्स—में स्त्री-अस्मिता, आत्मसंघर्ष, आर्थिक स्वावलम्बन और पितृसत्ता-विरोध के आयामों का विश्लेषण करना। तृतीय, भारतीय एवं पाश्चात्य नारीवादी दृष्टियों के आलोक में इन कृतियों की व्याख्या करना। चतुर्थ, यह मूल्यांकन करना कि यह साहित्य स्त्री की चेतना और सामाजिक परिवर्तन को किस प्रकार अभिव्यक्ति देता है (कुमारी, 2022)।

1.4 अध्ययन का महत्त्व

स्त्री-चेतना के अध्ययन का सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों महत्त्व है। सैद्धान्तिक दृष्टि से यह भारतीय समाज में स्त्री की बदलती भूमिका, साहित्यिक प्रतिनिधित्व और नारीवादी चिंतन के अन्तर्सम्बन्ध को समझने में सहायक है। व्यावहारिक दृष्टि से यह लैंगिक समानता, सामाजिक न्याय और स्त्री-सशक्तिकरण से जुड़े व्यापक प्रश्नों को साहित्यिक विमर्श के माध्यम से रेखांकित करता है (देवी, 2021)। चूँकि नवदोत्तरी हिंदी उपन्यास स्त्री के निजी अनुभव को व्यापक सामाजिक संरचनाओं से जोड़ता है, इसलिए इसका अध्ययन साहित्य और समाज के अन्तःसम्बन्ध को समझने की दृष्टि से विशेष प्रासंगिक है।

1.5 नवदोत्तरी हिंदी उपन्यास: उद्भव एवं विकास

नवदोत्तरी हिंदी उपन्यास के उद्भव को हिंदी उपन्यास की उस विकसित होती परम्परा के संदर्भ में समझा जा सकता है, जिसमें स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद भारतीय समाज में आए व्यापक परिवर्तनों ने कथाकारों की दृष्टि को प्रभावित किया। लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना, नगरीकरण, शिक्षा के प्रसार, मध्यवर्ग के

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049-4176

विस्तार तथा पारिवारिक संरचनाओं में आए परिवर्तन ने हिंदी उपन्यास का केन्द्र सामाजिक सुधार अथवा आदर्श जीवन की प्रस्तुति से हटाकर व्यक्ति के निजी अनुभव, मानसिक द्वन्द्व और अस्तित्वगत प्रश्नों की ओर स्थानान्तरित किया (चौधरी, 2017)। इस परिवर्तन के साथ उपन्यासकारों ने परिवार, विवाह, प्रेम, दाम्पत्य, लैंगिक सम्बन्ध और सामाजिक रूढ़ियों को नए दृष्टिकोण से देखना आरम्भ किया। इस प्रकार नवदोत्तरी हिंदी उपन्यास का उद्भव किसी एक निश्चित वर्ष से जोड़ने के बजाय हिंदी उपन्यास की विकसित होती सामाजिक चेतना और बदलती रचनात्मक दृष्टि की निरन्तर प्रक्रिया के रूप में देखा जाना अधिक उपयुक्त है।

इस विकास में स्त्री-केन्द्रित लेखन विशेष रूप से उल्लेखनीय है। प्रारम्भिक चरणों में स्त्री पात्रों को प्रायः परिवार, विवाह और नैतिक मर्यादाओं से सम्बद्ध भूमिकाओं में देखा जाता था, किन्तु विकसित होती नारी चेतना के साथ स्त्री स्वयं कथानक की सक्रिय केन्द्रवर्ती सत्ता बनने लगी (पाण्डेय, 2021)। उसके जीवन की समस्याओं को केवल पारिवारिक दुख के रूप में नहीं, बल्कि पितृसत्तात्मक व्यवस्था, आर्थिक निर्भरता और लैंगिक असमानता से जोड़कर देखा गया। इसी क्रम में प्रभा खेतान, मृदुला गर्ग, ममता कालिया, मैत्रेयी पुष्पा और चित्रा मुद्गल जैसी लेखिकाओं ने स्त्री के विविध अनुभवों को उपन्यास के केन्द्र में स्थापित किया, जिससे नारी-अस्मिता और स्त्री-स्वतंत्रता हिंदी उपन्यास की प्रमुख चिन्ताओं में स्थापित हुईं।

2. वैचारिक पृष्ठभूमि एवं पूर्ववर्ती अध्ययन

नारी चिंतन की वैचारिक पृष्ठभूमि भारतीय और पाश्चात्य दोनों नारीवादी परम्पराओं से निर्मित होती है। इन दृष्टियों को समझना चयनित उपन्यासों के विश्लेषण के लिए आवश्यक सैद्धान्तिक आधार प्रदान करता है (नायर, 2016)।

2.1 भारतीय नारीवादी चिंतन की पृष्ठभूमि

भारतीय नारीवादी चिंतन की पृष्ठभूमि भारतीय समाज की दीर्घ सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संरचना से निर्मित हुई है। भारतीय संदर्भ में स्त्री की स्थिति को केवल स्त्री-पुरुष सम्बन्धों के आधार पर समझना पर्याप्त नहीं है, क्योंकि यहाँ परिवार, जाति, धर्म, वर्ग, विवाह, परम्परा और सांस्कृतिक मान्यताओं ने स्त्री के जीवन को गहराई से प्रभावित किया है (भार्गव, 2019)। शिक्षा से वंचना, बाल-विवाह, विधवा-जीवन, पर्दा-प्रथा, दहेज तथा सम्पत्ति पर सीमित अधिकार जैसी व्यवस्थाओं ने स्त्री की स्वायत्तता को सीमित किया। इन परिस्थितियों के विरुद्ध राजा राममोहन राय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर तथा ज्योतिराव एवं सावित्रीबाई फुले जैसे समाज-सुधारकों ने स्त्री-शिक्षा और अधिकारों के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य किया। यह उल्लेखनीय है कि भारतीय स्त्री-प्रश्न आरम्भ से ही जाति और वर्ग के प्रश्नों से जुड़ा रहा, जिससे यह स्पष्ट होता है कि स्त्री-मुक्ति केवल उच्चजातीय स्त्री तक सीमित नहीं थी (झा, 2020)।

स्वतंत्रता के बाद संविधान द्वारा समानता और नागरिक अधिकारों की स्थापना, स्त्री-शिक्षा तथा रोजगार के अवसरों के विस्तार ने स्त्री की सामाजिक भूमिका में परिवर्तन किया; किन्तु पितृसत्तात्मक पारिवारिक संरचनाएँ पूर्णतः समाप्त नहीं हुईं। इसी विरोधाभास ने आधुनिक भारतीय नारीवादी चिंतन को नई दिशा दी। भारतीय नारीवादी दृष्टि ने स्त्री की मुक्ति को केवल लैंगिक समानता तक सीमित न रखकर सामाजिक

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049-4176

न्याय से जोड़ा, तथा यह स्वीकार किया कि जाति, वर्ग, धर्म और क्षेत्र स्त्री के अनुभव को अलग-अलग रूप प्रदान करते हैं (चक्रवर्ती, 2018)।

2.2 पाश्चात्य नारीवादी विचारधाराएँ

पाश्चात्य नारीवादी चिन्तन को किसी एक एकरूप आन्दोलन के रूप में नहीं देखा जा सकता। उदारवादी नारीवाद समानता और व्यक्तिगत अधिकार को आधार मानता है तथा शिक्षा, समान अवसर, समान वेतन और राजनीतिक प्रतिनिधित्व को स्त्री-मुक्ति का साधन मानता है (मेनन, 2017)। मार्क्सवादी एवं समाजवादी नारीवाद स्त्री की स्थिति को आर्थिक संरचना, श्रम और वर्गीय सम्बन्धों के संदर्भ में देखता है तथा घरेलू श्रम, आर्थिक निर्भरता और उत्पादन-प्रक्रिया में स्त्री की स्थिति को केन्द्र में रखता है। रेडिकल नारीवाद स्त्री के शोषण की मूल संरचना के रूप में पितृसत्ता को रखते हुए परिवार, विवाह, देह और यौनिकता पर पुरुष-नियंत्रण को स्त्री-अधीनता का प्रमुख साधन मानता है (सेन, 2019)।

अस्तित्ववादी नारीवाद स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व, आत्मचयन और आत्मनिर्णय को केन्द्र में रखता है, जिसके अनुसार स्त्री की पहचान जन्म से निर्धारित किसी स्थिर भूमिका के रूप में नहीं, बल्कि उसके अनुभवों, चुनावों और कर्मों से निर्मित होती है। उत्तर-आधुनिक एवं उत्तर-संरचनावादी नारीवाद स्त्री की किसी एक सार्वभौमिक पहचान को स्वीकार करने के बजाय यह प्रश्न उठाता है कि 'स्त्री' की पहचान स्वयं किस प्रकार निर्मित होती है, तथा इसमें भाषा, संस्कृति और सत्ता-संरचनाओं की भूमिका पर बल देता है (कपूर, 2021)। ये विचारधाराएँ चयनित उपन्यासों में स्त्री-अनुभवों को अलग-अलग वैचारिक दृष्टियों से समझने के उपकरण प्रदान करती हैं, यद्यपि इन्हें भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में व्याख्यायित करना आवश्यक है।

2.3 नारी-विमर्श और नारीवाद: अन्तर एवं सम्बन्ध

नारी-विमर्श और नारीवाद परस्पर गहरे रूप से जुड़े होते हुए भी समानार्थी नहीं हैं। नारीवाद मूलतः एक वैचारिक और सामाजिक आन्दोलन है जो स्त्री-पुरुष असमानता को समाप्त कर स्त्री को समान अधिकार और स्वतंत्रता प्रदान करने के लिए वैचारिक आधार प्रस्तुत करता है। इसके विपरीत, नारी-विमर्श स्त्री के जीवन, अनुभवों, सामाजिक स्थिति और अस्मिता का आलोचनात्मक अध्ययन है, जो इन विचारों को स्त्री के वास्तविक जीवन और सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों के संदर्भ में विश्लेषित करता है (तिवारी, 2022)। उदाहरणार्थ, स्त्री की आर्थिक निर्भरता को नारीवादी दृष्टि समानता के प्रश्न के रूप में देखती है, जबकि नारी-विमर्श यह विश्लेषित करता है कि यह निर्भरता परिवार में स्त्री की निर्णय-क्षमता, आत्मसम्मान और सामाजिक प्रतिष्ठा को किस प्रकार प्रभावित करती है। इस दृष्टि से नारीवाद इन उपन्यासों के वैचारिक पक्ष को समझने का आधार देता है, जबकि नारी-विमर्श उनमें अभिव्यक्त स्त्री-अनुभवों का व्यापक विश्लेषण सम्भव बनाता है।

2.4 पूर्ववर्ती अध्ययनों की समीक्षा

हिंदी साहित्य में नारी-विमर्श पर हुए अध्ययनों में स्त्री जीवन की समस्याओं, उसके संघर्ष और सामाजिक स्थिति को प्रमुख विषयों के रूप में देखा गया है। हाल के अध्ययनों में स्त्री-अस्मिता, देह-विमर्श तथा

आर्थिक स्वावलम्बन के प्रश्नों को अधिक केन्द्रीयता प्राप्त हुई है (श्रीवास्तव, 2020)। कुछ अध्येताओं ने महिला उपन्यासकारों के लेखन में स्त्री के मनोवैज्ञानिक द्वन्द्व और आत्मसंघर्ष को रेखांकित किया है, तो अन्य ने पितृसत्ता-विरोध और सामाजिक प्रतिरोध की प्रवृत्तियों पर बल दिया है (अंसारी, 2023)। तथापि, चयनित पाँच उपन्यासों को एक साथ लेकर नारी चिंतन के विविध आयामों—अस्मिता, श्रम, देह, विवाह, मातृत्व और आत्मनिर्णय—का समेकित तुलनात्मक अध्ययन अपेक्षाकृत कम हुआ है। प्रस्तुत शोध इसी अन्तराल को सम्बोधित करने का प्रयास करता है।

इसके अतिरिक्त, समकालीन अध्ययनों ने नारीवादी सिद्धान्तों के भारतीयकरण (indigenisation) के प्रश्न को भी उठाया है। अनेक अध्येताओं का मत है कि पाश्चात्य नारीवादी अवधारणाएँ भारतीय स्त्री-अनुभव को पूर्णतः व्याख्यायित नहीं कर सकतीं, क्योंकि भारतीय स्त्री का जीवन जाति, संयुक्त परिवार, धार्मिक मान्यताओं और सामुदायिक संरचनाओं से गहराई से प्रभावित है (नायर, 2016; मेनन, 2017)। इस दृष्टि से चयनित उपन्यासों का अध्ययन इस बात का अवसर देता है कि पाश्चात्य सैद्धान्तिक उपकरणों और भारतीय सामाजिक यथार्थ के बीच किस प्रकार का संवाद स्थापित किया जाए। यही अन्तःसंवाद प्रस्तुत शोध की पद्धतिगत विशेषता है, जो सिद्धान्त और पाठ (text) दोनों को समान महत्त्व देती है।

3. शोध-प्रविधि

प्रस्तुत शोध गुणात्मक (qualitative) एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें पाठ-आधारित विश्लेषण (textual analysis) को प्रमुख प्रविधि के रूप में अपनाया गया है, जिसके अन्तर्गत चयनित उपन्यासों के कथानक, पात्रों, संवादों और सामाजिक परिवेश का सूक्ष्म अध्ययन कर नारी चिंतन के विविध आयामों की पहचान की गई है (महतो, 2021)। अध्ययन के लिए पाँच प्रतिनिधि उपन्यासों—प्रभा खेतान कृत छिन्नमस्ता, मृदुला गर्ग कृत कठगुलाब, मैत्रेयी पुष्पा कृत चाक, चित्रा मुद्गल कृत आवाँ तथा ममता कालिया कृत एक पत्नी के नोट्स—का सोद्देश्य चयन किया गया, क्योंकि ये कृतियाँ ग्रामीण एवं शहरी, श्रमिक एवं मध्यवर्गीय तथा विवाहित एवं स्वतंत्र स्त्री-अनुभवों की विविधता का प्रतिनिधित्व करती हैं।

अध्ययन में प्राथमिक स्रोत के रूप में मूल उपन्यास तथा द्वितीयक स्रोत के रूप में नारीवादी सिद्धान्त, आलोचनात्मक ग्रंथ, शोध-पत्रिकाओं में प्रकाशित आलेख और समीक्षाएँ प्रयुक्त की गई हैं। विश्लेषण की दृष्टि तीन परस्पर सम्बद्ध स्तरों पर कार्य करती है—पितृसत्तात्मक संरचना की पहचान, स्त्री की चेतना एवं आत्मसंघर्ष का विश्लेषण, तथा उसके प्रतिरोध और स्वायत्तता की प्रक्रिया का अध्ययन (महतो, 2021)। पाश्चात्य नारीवादी अवधारणाओं को सीधे आरोपित करने के बजाय उन्हें भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में व्याख्यायित किया गया है, क्योंकि चयनित उपन्यासों की स्त्रियाँ भारतीय परिवार, जाति, वर्ग, संस्कृति और सामाजिक नैतिकता से निर्मित परिवेश में जीवन जीती हैं। गुणात्मक शोध होने के कारण इस अध्ययन की सीमाएँ भी हैं—इसमें व्याख्या की व्यक्तिनिष्ठता की सम्भावना रहती है, जिसे स्रोतों की विविधता और सैद्धान्तिक आधार की स्पष्टता के माध्यम से सन्तुलित करने का प्रयास किया गया है।

4. विश्लेषण एवं विवेचन

चयनित उपन्यासों के विश्लेषण से नारी चिंतन के कई प्रमुख आयाम उभरकर सामने आते हैं, जिन्हें निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत विवेचित किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि ये आयाम परस्पर पृथक न होकर एक-दूसरे से गुँथे हुए हैं—स्त्री की अस्मिता उसके आर्थिक स्वावलम्बन से, देह-चेतना विवाह और पितृसत्ता के प्रश्नों से, तथा आत्मनिर्णय समग्र सामाजिक परिवेश से जुड़ा हुआ है। इसलिए इन आयामों को समग्र दृष्टि से समझना आवश्यक है (श्रीवास्तव, 2020)।

4.1 स्त्री-अस्मिता और आत्मबोध

नवदोत्तरी हिंदी उपन्यास की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति स्त्री-अस्मिता की खोज है। स्त्री अब केवल पत्नी, माँ, पुत्री अथवा बहू जैसी पारम्परिक भूमिकाओं तक सीमित नहीं रहती, बल्कि अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व और आत्मसम्मान के प्रति सजग दिखाई देती है। छिन्नमस्ता की प्रिया अपने जीवन को केवल पत्नी और बहू की भूमिका में सीमित न रखकर अपने स्वतंत्र अस्तित्व की तलाश करती है (खेतान, 2019 में उद्धृत; शर्मा, 2019)। इसी प्रकार कठगुलाब की स्मिता शिक्षा और आत्मसम्मान के माध्यम से अपने जीवन का पुनर्निर्माण करती है। इन पात्रों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि स्त्री-अस्मिता आत्मबोध की एक सतत प्रक्रिया है, जिसमें स्त्री अपने अस्तित्व की शर्तों को स्वयं निर्धारित करने की दिशा में आगे बढ़ती है (पाण्डेय, 2021)।

स्त्री-अस्मिता का यह आत्मबोध केवल व्यक्तिगत स्तर पर सीमित नहीं रहता, बल्कि सामाजिक संरचनाओं के साथ स्त्री के सम्बन्ध को नए ढंग से परिभाषित करता है। पारम्परिक साहित्य में स्त्री की पहचान प्रायः पुरुष-नायक के संदर्भ में निर्मित होती थी, किन्तु नवदोत्तरी उपन्यासों में स्त्री स्वयं कथा की केन्द्रवर्ती सत्ता बन जाती है (वर्मा एवं सिंह, 2020)। कठगुलाब की स्मिता, नर्मदा, मारियान और असीमा जैसे पात्र स्त्री-देह, शोषण, शिक्षा, स्वायत्तता और प्रतिरोध के विभिन्न आयामों को अभिव्यक्त करते हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि स्त्री-अस्मिता कोई एकरूप अनुभव नहीं, बल्कि जाति, वर्ग और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अनुसार बहुस्तरीय होती है। इस दृष्टि से उत्तर-आधुनिक नारीवादी दृष्टिकोण विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होता है, क्योंकि वह 'स्त्री' की किसी एकल पहचान के स्थान पर उसके विविध सामाजिक अनुभवों को महत्त्व देता है (कपूर, 2021)। अस्मिता की यह खोज अन्ततः स्त्री को अपने अस्तित्व की शर्तों को स्वयं निर्धारित करने की दिशा में अग्रसर करती है।

4.2 आर्थिक स्वावलम्बन और श्रम

नवदोत्तरी उपन्यासों में आर्थिक स्वावलम्बन को स्त्री की स्वतंत्रता और आत्मसम्मान से गहराई से जोड़ा गया है। छिन्नमस्ता की प्रिया का व्यवसाय उसकी स्वतंत्र पहचान का आधार बनता है—उसके लिए व्यवसाय केवल आजीविका नहीं, बल्कि उसकी 'आइडेंटिटी' है (कुमारी, 2022)। आवाँ में नमिता का रोजगार और श्रमिक जीवन आर्थिक आवश्यकता के साथ-साथ स्त्री के आत्मसम्मान के प्रश्न से जुड़ता है। मार्क्सवादी एवं समाजवादी नारीवादी दृष्टि से देखने पर स्पष्ट होता है कि स्त्री का श्रम और आर्थिक स्वतंत्रता उसके सशक्तिकरण के महत्त्वपूर्ण आयाम बनते हैं, तथा आर्थिक निर्भरता पितृसत्तात्मक नियंत्रण

को सुदृढ़ करती है (सेन, 2019)। आवाँ का श्रमिक जीवन स्त्री की आर्थिक स्थिति और सामाजिक असुरक्षा के प्रश्न को व्यापक वर्गीय संदर्भ प्रदान करता है।

आर्थिक स्वावलम्बन का प्रश्न स्त्री की सामाजिक निर्णय-क्षमता से भी गहराई से जुड़ा है। जब स्त्री आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होती है, तो परिवार और समाज में उसकी स्थिति, आत्मसम्मान और अधिकार-बोध में गुणात्मक परिवर्तन आता है (श्रीवास्तव, 2020)। छिन्नमस्ता में प्रिया का व्यवसाय उसे केवल आर्थिक सुरक्षा ही नहीं देता, बल्कि पारिवारिक सत्ता-संबंधों में उसकी सौदेबाजी की शक्ति (bargaining power) को भी बढ़ाता है। इसके विपरीत, आवाँ में श्रमिक स्त्री का जीवन यह दिखाता है कि आर्थिक भागीदारी अपने आप में मुक्ति की गारंटी नहीं है; कार्यक्षेत्र में शोषण, असुरक्षा और वर्गीय विषमता स्त्री-श्रम को नई जटिलताओं से जोड़ देती है (कुमारी, 2022)। इस प्रकार नवदोत्तरी उपन्यास आर्थिक स्वावलम्बन को एक द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जिसमें मुक्ति की सम्भावना और शोषण का यथार्थ दोनों उपस्थित रहते हैं।

4.3 देह, प्रेम और यौनिकता

नवदोत्तरी उपन्यासों में स्त्री की देह और यौनिकता से जुड़े प्रश्नों को अपेक्षाकृत स्पष्टता के साथ अभिव्यक्ति मिली है। स्त्री की देह को केवल पुरुष की इच्छा अथवा सामाजिक नैतिकता के अधीन मानने के स्थान पर उसके अनुभव और अधिकार को केन्द्र में लाया गया (तिवारी, 2022)। कठगुलाब में स्मिता के यौन शोषण का अनुभव, चाक में रेशम के शरीर और मातृत्व पर सामाजिक नियंत्रण तथा आवाँ में नमिता के साथ कार्यक्षेत्रीय यौन शोषण का प्रसंग इस प्रवृत्ति को अलग-अलग रूपों में प्रस्तुत करते हैं। रेडिकल नारीवादी दृष्टि से यहाँ प्रश्न केवल व्यक्तिगत अत्याचार का नहीं, बल्कि उस सामाजिक व्यवस्था का है जो स्त्री की देह और इच्छाओं पर अधिकार स्थापित करती है (सेन, 2019)।

4.4 विवाह, परिवार और पितृसत्ता का प्रतिरोध

इन उपन्यासों में परिवार और विवाह को अपरिवर्तनीय आदर्श संस्थाओं के रूप में स्वीकार करने के बजाय उनका आलोचनात्मक पुनर्मूल्यांकन किया गया है। एक पत्नी के नोट्स की कविता का वैवाहिक जीवन यह प्रश्न उठाता है कि उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी दाम्पत्य में स्त्री को मानसिक और वैचारिक स्वतंत्रता किस सीमा तक प्राप्त होती है (देवी, 2021)। कठगुलाब में स्मिता और नर्मदा का प्रतिरोध, चाक में सारंग का सार्वजनिक जीवन में सक्रिय हस्तक्षेप तथा छिन्नमस्ता में प्रिया का आर्थिक एवं वैचारिक स्वावलम्बन पितृसत्ता-विरोध की प्रवृत्ति को अभिव्यक्त करते हैं। यहाँ प्रतिरोध केवल विद्रोही कथन नहीं, बल्कि अपने जीवन के निर्णय स्वयं लेने की प्रक्रिया है (अंसारी, 2023)।

विवाह संस्था का यह पुनर्मूल्यांकन परम्परा और आधुनिकता के द्वन्द्व को भी उजागर करता है। पारम्परिक पारिवारिक मूल्य, विवाह संस्था और सामाजिक नैतिकता आधुनिक शिक्षा, रोजगार और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की नई चेतना से टकराते हैं (मिश्र, 2018)। एक पत्नी के नोट्स में कविता की शिक्षा और आधुनिक चेतना के बावजूद दाम्पत्य जीवन में उपस्थित पारम्परिक सत्ता-संबंध इस द्वन्द्व को स्पष्ट करते हैं। यहाँ यह प्रश्न महत्त्वपूर्ण बन जाता है कि क्या शिक्षा और आर्थिक स्वतंत्रता अकेले स्त्री को

वैवाहिक जीवन में समानता दिला सकती है, अथवा इसके लिए सामाजिक मानसिकता में भी गहन परिवर्तन आवश्यक है (देवी, 2021)। चाक में सारंग का ग्रामीण सामाजिक व्यवस्था से निकलकर सार्वजनिक जीवन में सक्रिय होना इसी परिवर्तन की सम्भावना को दर्शाता है, जबकि रेशम के मातृत्व पर सामाजिक नियंत्रण परम्परागत पितृसत्ता की जड़ता को उजागर करता है (अंसारी, 2023)।

4.5 आत्मनिर्णय और स्वतंत्र व्यक्तित्व की स्थापना

उपर्युक्त सभी आयामों का एक महत्त्वपूर्ण परिणाम आत्मनिर्णय की चेतना है। स्त्री अपने जीवन, शिक्षा, रोजगार, प्रेम, विवाह, मातृत्व और सामाजिक भूमिका के सम्बन्ध में स्वयं निर्णय लेने की आकांक्षा व्यक्त करती है। छिन्नमस्ता की प्रिया का व्यवसाय, कठगुलाब की स्मिता का जीवन-पुनर्निर्माण, चाक की सारंग का सार्वजनिक जीवन में प्रवेश और आवाँ की नमिता का शोषण के विरुद्ध स्वतंत्र निर्णय इस चेतना के विभिन्न रूप हैं (कुमारी, 2022)। अस्तित्ववादी नारीवादी दृष्टि से देखें तो ये पात्र अपनी पहचान को समाज-निर्धारित भूमिका से अलग, अपने कर्म और चुनाव से निर्मित करती हैं। यह उल्लेखनीय है कि इन स्त्रियों की स्वतंत्रता अपने-अपने भारतीय सामाजिक परिवेश से निर्मित होती है और परिवार, सामाजिक उत्तरदायित्व तथा सांस्कृतिक अपेक्षाओं के साथ अन्तःक्रिया करती है (झा, 2020)।

4.6 ग्रामीण-शहरी परिवेश और हाशिये का जीवन

नवदोत्तरी उपन्यासों में स्थान (setting) केवल पृष्ठभूमि नहीं रहता, बल्कि पात्रों के जीवन और चेतना को निर्धारित करने वाली सामाजिक शक्ति बन जाता है। चाक ग्रामीण समाज की जातिगत, सामन्ती और पितृसत्तात्मक संरचनाओं को सामने लाता है, जबकि आवाँ महानगरीय श्रमिक जीवन, आर्थिक असुरक्षा और औद्योगिक परिवेश का चित्र प्रस्तुत करता है (मिश्र, 2018)। इस भिन्नता से यह स्पष्ट होता है कि स्त्री का संघर्ष उसके सामाजिक-आर्थिक परिवेश के अनुसार अलग-अलग रूप ग्रहण करता है। ग्रामीण स्त्री जहाँ जाति, कुल-मर्यादा और सामुदायिक निगरानी से जूझती है, वहीं शहरी श्रमिक स्त्री वर्गीय शोषण और कार्यक्षेत्रीय असुरक्षा का सामना करती है (चक्रवर्ती, 2018)।

इन उपन्यासों में समाज के उन वर्गों को भी कथात्मक स्थान प्राप्त हुआ जिन्हें मुख्यधारा के साहित्य में अपेक्षाकृत कम प्रतिनिधित्व मिलता था। वर्ग, जाति, श्रम और सामाजिक वंचना के प्रश्नों को व्यक्तिगत जीवन के साथ जोड़ा गया, जिससे नारी चिंतन का दायरा उच्चवर्गीय या मध्यवर्गीय स्त्री तक सीमित न रहकर हाशिये की स्त्री तक विस्तृत हुआ (भार्गव, 2019)। यह प्रवृत्ति भारतीय नारीवादी चिंतन की उस विशेषता के अनुरूप है, जो स्त्री-प्रश्न को जाति और वर्ग के प्रश्नों से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ मानती है। इस दृष्टि से चयनित उपन्यास स्त्री-अनुभव की बहुस्तरीयता और अन्तःखण्डीयता (intersectionality) को प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त करते हैं।

5. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि नवदोत्तरी हिंदी उपन्यासों में नारी चिंतन का उद्भव बदलते सामाजिक यथार्थ और विकसित होती स्त्री चेतना के अन्तर्सम्बन्ध से हुआ। इस साहित्य में स्त्री केवल त्याग, ममता और सहनशीलता की पारम्परिक प्रतिमा नहीं रहती, बल्कि अस्मिता, आत्मसम्मान, आर्थिक

स्वावलम्बन और आत्मनिर्णय की आकांक्षा रखने वाली चेतनशील इकाई के रूप में विकसित होती है (शर्मा, 2019; पाण्डेय, 2021)। चयनित पाँच उपन्यास—छिन्नमस्ता, कठगुलाब, चाक, आवाँ तथा एक पत्नी के नोट्स—स्त्री-अस्मिता, श्रम, देह, विवाह, मातृत्व और प्रतिरोध के आयामों को अलग-अलग सामाजिक परिवेशों में प्रस्तुत करते हैं। इनका विश्लेषण यह दर्शाता है कि नवदोत्तरी हिंदी उपन्यास स्त्री की 'स्थिति' के वर्णन से आगे बढ़कर उसकी 'चेतना' के विश्लेषण की ओर संक्रमण करता है।

अध्ययन का एक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि भारतीय स्त्री-अनुभव को समझने के लिए पाश्चात्य नारीवादी सिद्धान्तों को उनकी मूल रूप में आरोपित करना पर्याप्त नहीं है; इन्हें भारतीय परिवार, जाति, वर्ग और सांस्कृतिक संरचनाओं के संदर्भ में व्याख्यायित करना आवश्यक है (चक्रवर्ती, 2018; मेनन, 2017)। नारी चिंतन का यह स्वरूप केवल पुरुष-विरोध तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका केन्द्र स्त्री के आत्मबोध, स्वतंत्र निर्णय और सामाजिक पहचान की स्थापना है। इस प्रकार नवदोत्तरी हिंदी उपन्यास स्त्री-अस्मिता और सामाजिक परिवर्तन की चेतना को सशक्त करने वाला महत्त्वपूर्ण साहित्यिक दस्तावेज सिद्ध होता है।

6. भावी शोध की दिशाएँ

प्रस्तुत अध्ययन कुछ महत्त्वपूर्ण भावी शोध-दिशाओं की ओर संकेत करता है। प्रथम, इस अध्ययन को पुरुष उपन्यासकारों द्वारा रचित कृतियों तक विस्तृत कर स्त्री-चित्रण में लिंग-दृष्टि (gender perspective) के अन्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है (राव, 2018)। द्वितीय, दलित स्त्री-विमर्श, आदिवासी स्त्री-अनुभव और अल्पसंख्यक स्त्री-चेतना जैसे अन्तःखण्डीय आयामों पर केन्द्रित अध्ययन की आवश्यकता है, जिससे स्त्री-अनुभव की बहुस्तरीयता अधिक स्पष्ट हो सके (भार्गव, 2019)। तृतीय, नवदोत्तरी उपन्यासों की तुलना समकालीन डिजिटल एवं वेब-आधारित हिंदी कथा-लेखन में उभरती नई स्त्री-चेतना से की जा सकती है। चतुर्थ, अनुवाद और ग्रहण-अध्ययन (reception study) के माध्यम से यह देखा जा सकता है कि ये कृतियाँ भारतीय एवं वैश्विक पाठक-वर्ग द्वारा किस प्रकार ग्रहण की गई हैं (नायर, 2016)। इन दिशाओं में शोध हिंदी नारी-विमर्श की समझ को और अधिक व्यापक तथा समावेशी बना सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अंसारी, स. (2023). समकालीन हिंदी महिला-कथा में पितृसत्ता-विरोध और स्त्री-कर्तृत्व. दक्षिण एशियाई साहित्य अध्ययन पत्रिका, 11(2), 45–62.
2. कपूर, द. (2021). उत्तर-संरचनावादी नारीवाद और स्त्री-पहचान का निर्माण. नारीवादी सिद्धान्त समीक्षा, 7(3), 188–204.
3. कुमारी, र. (2022). चित्रा मुद्गल के 'आवाँ' में आर्थिक स्वावलम्बन और आत्मनिर्णय. भारतीय लेखन पत्रिका, 14(1), 98–116.
4. गुप्ता, अ. (2020). नारी चिंतन की अवधारणा: स्त्री, सत्ता और सामाजिक संरचनाएँ. साहित्य एवं समाज पत्रिका, 8(1), 15–33.

5. चक्रवर्ती, र. (2018). लैंगिक समानता से आगे: सामाजिक न्याय और भारतीय नारीवाद. आर्थिक एवं राजनीतिक समीक्षा, 53(41), 33–40.
6. चौधरी, न. (2017). स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में स्त्री-विमर्श: प्रवृत्तियाँ एवं परिवर्तन. हिंदी साहित्य समीक्षा, 9(1), 71–88.
7. झा, स. (2020). परम्परा और स्वायत्तता के बीच भारतीय स्त्रीत्व: एक साहित्यिक पाठ. दक्षिण एशिया समीक्षा, 41(4), 356–372.
8. तिवारी, ग. (2022). नारी-विमर्श और नारीवाद: हिंदी साहित्यिक विमर्श में अन्तर एवं अन्तःसम्बन्ध. साहित्यिक आलोचना पत्रिका, 15(1), 88–105.
9. देवी, प. (2021). ममता कालिया की कथा में विवाह, आधुनिकता और शिक्षित स्त्री. समकालीन दलित स्वर, 13(2), 210–225.
10. नायर, ल. (2016). पाश्चात्य नारीवादी ढाँचे और भारतीय साहित्यिक आलोचना. तुलनात्मक साहित्य अध्ययन, 53(1), 66–84.
11. पाण्डेय, व. (2021). हिंदी कथा में महिला उपन्यासकार और स्त्री-आत्मपरकता का पुनर्निर्माण. उत्तर-औपनिवेशिक लेखन पत्रिका, 57(3), 312–329.
12. भार्गव, म. (2019). भारतीय नारीवादी चिंतन में जाति, लिंग और स्त्री-प्रश्न. भारतीय लिंग अध्ययन पत्रिका, 26(3), 289–307.
13. महतो, ब. (2021). नारीवादी साहित्यिक शोध में पाठ-विश्लेषण की पद्धति. मानविकी शोध पत्रिका, 12(2), 55–70.
14. मिश्र, क. (2018). सामाजिक परिवर्तन और आधुनिक हिंदी उपन्यासों में स्त्री का प्रतिनिधित्व. हिंदी अध्ययन त्रैमासिक, 6(4), 129–147.
15. मेनन, न. (2017). उदारवादी नारीवाद और भारतीय संदर्भ: एक आलोचनात्मक मूल्यांकन. भारतीय राजनीति विज्ञान पत्रिका, 78(2), 241–256.
16. राव, स. (2018). हिंदी कथा में लिंग-दृष्टि और वाचिक स्वर. भारतीय साहित्य, 62(5), 158–174.
17. वर्मा, र., एवं सिंह, प. (2020). हिंदी उपन्यास में स्त्री-कर्तृत्व और सामाजिक सहभागिता. भारतीय लिंग अध्ययन पत्रिका, 27(2), 176–194.
18. शर्मा, द. (2019). स्थिति से चेतना तक: नवदोत्तरी हिंदी उपन्यासों में विकसित होती स्त्री. आधुनिक भारतीय साहित्य पत्रिका, 7(2), 40–59.
19. श्रीवास्तव, उ. (2020). समकालीन हिंदी स्त्री-लेखन में देह, अस्मिता और आर्थिक स्वतंत्रता. दक्षिण एशियाई लोक-संस्कृति, 18(3), 245–261.
20. सेन, म. (2019). रेडिकल नारीवाद, देह और यौनिकता: दक्षिण एशियाई साहित्य के संदर्भ में. लिंग एवं संस्कृति समीक्षा, 10(1), 77–95.